संन्यासी का गर्व

सुथरा जी मीरी पीरी के शहनशाह श्री गुरु हरगोबिन्द साहिब जी के सबसे लाडले पुत्र थे। वे गुरु जी के पास समय असमय कभी भी पहुँच जाते थे।

एक बार सतगुरु महाराज अपने सिंहासन पर विराजमान करतार के रंग में मस्त बैठे थे। इतने में 'सुथरे शाह जी' एक संन्यासी को साथ लेकर आए। उस संन्यासी को अपने संन्यासी होने पर बड़ा गर्व था और सुथरा इस बात को जान गया था। सुथरे ने आते ही अपने सतगुरु के चरणों में सिर झुकाया। सतगुरु अपनी मस्ती में थे। उनका ध्यान टूट गया। वे सुथरे से बोले - 'सुथरे'! यह किस समय आ गया, समय तो देख लिया कर।

'मेरे पातशाहों के पातशाह, यह संन्यासी आपके दर्शनों का अभिलाषी था। आप हर किसी की मुराद पूरी करते हैं। इन पर भी कृपा कीजिए', सुथरे ने कहा। 'हम कुछ माँगने नहीं आए हैं। हम तो केवल आपकी प्रशंसा सुनकर आए हैं।' उस संन्यासी ने कहा।

सतगुरु ने उस संन्यासी को सत्कार दिया और बैठने के लिए कहा। वह संन्यासी सतगुरु के सामने उनके सिंहासन पर ही बैठ गया। सुथरे को बड़ा गुस्सा आया कि एक साधारण सा पाखण्डी साधु मेरे सतगुरु के बराबर बैठ गया है। पर घर आए मेहमान को कुछ कह नहीं सकते इसलिए वह चुप रहे और चौर (चवर करना) पकड़ कर सतगुरु के पीछे खड़े होकर चौर करने लगे।

अब उस संन्यासी का मुँह और सतगुरु की पीठ सुथरे की ओर थी। सतगुरु ने बड़े प्यार से महात्मा जी से पूछा, 'महाराज आप कहाँ से आए है? आप

का शुभ नाम क्या है? हमारे लिए कोई सेवा हो तो आज्ञा दीजिए।' संन्यासी ने कहा- हम उत्तराखण्ड से आए हैं। लोग हमें शान्त स्वरूप बनखण्डी महात्मा कहते है।' सुथरे को महात्मा के इन शब्दों में घमण्ड नज़र आया। उसने सीधा हाथ खड़ा करके बीच की अंगुली हिलाते हुए महात्मा की तरफ देखा। नहात्मा को गुस्सा तो बहुत आया पर वह गुस्से को पी गए।

उस संन्यासी ने झोली में से कुछ फूल निकाले और सतगुरु को देते हुए कहा - 'यह हमारी श्रद्धा के पुष्प हैं प्रसाद लीजिए।' संन्यासी के यह वचन सुनकर सुथरा आगे बड़ा और दोनों हाथ फैलाकर फूल लेने लगा। संन्यासी ने कह - 'यह प्रसाद आपके लिए नहीं है, महाराज जी के लिए है।' 'महात्मा जी यहाँ तो प्रसाद सबके लिए होता है। पहले प्रसाद हम लेंगे फिर महाराज के चरणों में रख देंगे।' सुथरा जी ने कहा। संन्यासी बोला - 'यह तो विष्णु नहाराज जी के आश्रम का प्रसाद है। यह चरणों में रखे जाने वाले फूल नहीं है।'

'यहाँ नो स्वयं विष्णु महाराज फूल चढ़ाने आते हैं। अगर आपने भी दर्शन करने हों तो सुबह आ जाना।' सुथरे की बातों से संन्यासी जी को गुस्सा तो खूब आ रहा था पर वह अपने गुस्से को पी गए तथा बोले - महाराज वो विष्णु कौन है? जो प्रातः काल आपके दर्शनों के लिए आता है।

सतगुरु बोले - छोड़िए इन बातों को महाराज, आप ने गीता तो पढ़ी होगी उसमें भगवान कृष्ण ने कहा है - भगवान हर युग में संसार को तारने के लिए अवतार लेते हैं। कलयुग में गुरु नानक अवतार हुए है जो जीवों का उद्धार करने के लिए पैदा हुए है। जैसे हर युग का अवतार माना जाता है। कलयुग में उनका ही पहरा है और उनका दर्शन करने के लिए कई देवी, देवता और श्रद्धालु आते हैं ।

संन्यासी को महाराज के यह वचन कड़वे लगे। सुथरा संन्यासी के हाव-भाव से समझ गया कि वह गुस्से में है। सुथरे शाह जी ने संन्यासी की तरफ देखते हुए अपना सीधा हाथ हिलाया, जिससे संन्यासी जी को गुस्सा आ गया और वह गालियाँ निकालने लगे। 'सुथरा' चुप करके सतगुरु के पीछे खड़ा हो गया जैसे उसे कुछ पता ही न हो कि यहाँ क्या हो रहा है।

श्री हरगोबिन्द साहिब जी कभी संन्यासी की तरफ तो कभी सुथरे की तरफ देख रहे थे। सतगुरु जी ने संन्यासी से पूछा- क्या बात है आप इतने गुस्से में क्यों आ गए हैं? 'इस बदमाश से पूछो, यह हमारा मज़ाक उड़ा रहा है।' संन्यासी ने कहा। सतगुरु ने कहा- सुथरे, यह संन्यासी जी क्या कहते हैं? 'सच्चे पातशाह जी, यह शान्त स्वरूप स्वामी जी तो आपके साथ ज्ञान गोष्ठी कर रहे हैं। मैं तो आँखें बन्द करके चुपचाप खड़ा हूँ।' 'सुथरे' की ऐसी बात सुनकर स्वामी जी गुस्से में आकर खड़े हो गए और बोले - यह क्या बकवास करता है। महात्मा लोगों का अपमान करके फिर भी ऐसी बातें बनाता है?

'महाराज, बात क्या है? कुछ हमें भी तो बताओ, आखिर हुआ क्या?' सतगुरु ने पूछा। 'इस बदमाश से पूछो। यह तो कोई चाण्डाल है जो महात्मा लोगों का अपमान करता है।' संन्यासी ने फिर कहा। 'क्यों सुथरे क्या बात है? तुमने संन्यासी जी को नाराज़ कर दिया।' सतगुरु ने कहा। 'महाराज, अन्तर्यामी पातशाह।' मेरे जैसे गरीब से कोई क्या नाराज़ होगा। महात्मा जी तो आपके साथ ही ज्ञान गोष्ठी कर रहे थे। इतनी बात जरूर हुई कि जब हजूर ने इनका नाम पूछा तो इन्होंने कहा था कि लोग हमें शान्त स्वरूप बनखण्डी महात्मा कहते हैं।

इस वक्त मुझे कुछ शक हुआ कि इनके अन्दर तो क्रोध की ज्वाला जल रही है, तो यह शान्त स्वरूप कैसे हुए। मुझे इनके अन्दर की आग नज़र

आई। मैंने हजूर से आँख बचाकर गुस्से को हवा दी। जब मुझे आग जलती हुई प्रतीत हुई तो मैंने दो अंगुलियों से छेड़ा तो ज्वालामुखी फट गया। बताओ पातशाह जी, इसमें मेरा क्या कसूर है। सतगुरु जी मुस्कुराए तो वह संन्यासी चुप करके वहाँ से चला गया। बाद में सतगुरु जी ने आदर से आवाज़ भी दी पर वह नहीं रुके।